



THE TIMES OF INDIA

Date: 15-09-26

For Federalism

Federal systems haven't grown as fast as democracy, but world would be a better place with more of them

TOI Editorials

Is UK on the brink of breakup? You'd imagine it is, judging by the chatter. Much has been made of Monday's unofficial meeting between first ministers of Scotland, Wales, and Northern Ireland, to sign a memorandum on their right to seek independence. But, divided, these nations would be weaker than they are under the Union Jack. Is there no way they can fulfil their nationalistic aspirations without drawing hard boundary lines? There is – federalism – and it's been tried and tested successfully in their former colony across the pond for almost 240 years.

No doubt, federalism's not spread as fast as democracy – there are only about 25 federal countries even now, India included – but that's because allowing a degree of autonomy to regions is harder than holding elections. Remember the 2002 Iraqi referendum under Saddam? He won it with 100% of votes.

If UK's 'nations' are itching right now, it's because they feel they aren't getting a good deal from Westminster, which pockets most of the tax revenues and then hands them out as support. In contrast, a federal model, like Switzerland's, enables each nation or region to shape its destiny. There, the confederation or "centre" takes a smaller cut of revenues than the cantons and the communes under them. Cantons vary widely in terms of size and population, but they have equal representation in the upper house. That's also the case in the US senate, where each state gets two seats.

Such an equalising arrangement can hold disparate nations, like Scotland and Wales, together. Belgium has another federal model that might suit UK's needs. It evolved from a centralised state to accommodate different identities of the kind that UK has. Spain, on the other hand, allows regional autonomy while firmly centralising sovereignty.

Federalism matters because it emphasises negotiation in governance. It delegates authority to regions, not only for execution but also for framing laws. It ensures that the laws people live under aren't imposed from the top but reflect their values. In a way, UK has been moving towards a federal system of its own since it started "devolution" in late 1990s. Subjects like agriculture, health and education have been left to govts in Wales, N Ireland and Scotland, while Westminster reserves control over subjects like defence, immigration and foreign policy. It should go the whole hog now. The world can use more federalism.



दैनिक भास्कर

Date: 15-09-26

ब्रिक्स के समूह में चीन को और उदार होने की जरूरत है

संपादकीय

नई दिल्ली में दो-दिवसीय ब्रिक्स सम्पन्न हुआ। इसमें प्रधानमंत्री मोदी ने सही कहा कि मिनरल्स और टेक भू-राजनीतिक औजार बनें तो दुनिया का विकास रुकेगा। इशारा चीन की ओर था। वैश्विक समस्याओं पर कूटनीतिक बैलेंसिंग एक्ट जारी रखते हुए संयुक्त घोषणा-पत्र जारी हुआ। सभी नेताओं ने ब्रिक्स की महत्ता बताने के लिए पीपीपी आधार पर ग्लोबल जीडीपी में इस ब्लॉक का हिस्सा 40% बताया। हालांकि सही होता अगर नॉमिनल के आधार पर बताया जाता, जो 28% है। इसमें से भी अगर चीन को हटा दिया जाए तो यह मात्र 8% रह जाएगा। एक संगठन तब मजबूत होता है, जब सदस्य देश एक-दूसरे को मदद देकर आगे बढ़ाएं। क्या यह चीन की जिम्मेदारी नहीं थी कि वह भारतीय निर्यात के द्वार खोले, ताकि बढ़ता ट्रेड असंतुलन कम हो सके ? ट्रम्प से पहले का अमेरिका क्या वर्षों तक इस भूमिका में नहीं रहा है? क्या चीन के द्वारा ब्रिक्स सदस्यों को अपने टेक - उत्पाद की जगह टेक-कौशल बगैर किसी सौदे के देना समीचीन नहीं होता? अगर चीन से सटी उत्तरी-पूर्वी सीमा पर भारत जैसे निम्न आय वर्ग के देश को रक्षा पर अरबों रुपये सालाना खर्च करना पड़े तो ब्रिक्स के साझा घोषणा-पत्र तो निष्प्राण ही रहेंगे। चीन, भारत के पक्ष में ट्रेड को और आगे बढ़ाए, यही ब्रिक्स की दीर्घकालिक सफलता का पैमाना रहेगा।

Date: 15-09-26

ब्रिक्स ने जो हासिल किया है, वह कोई छोटी उपलब्धि नहीं

ब्रह्मा चेलानी, (पॉलिसी फॉर सेंटर रिसर्च के प्रोफेसर एमेरिटस)



सितम्बर के इसी महीने में, 20 साल पहले ब्राजील, रूस, भारत और चीन के विदेश मंत्रियों ने ब्रिक्स की पहली बैठक की थी। गोल्डमैन सैक के तत्कालीन अर्थशास्त्री जिम ओ'नील ने तेजी से बढ़ती इन चार अर्थव्यवस्थाओं के नामों के प्रथमाक्षरों के आधार पर इस समूह का नाम 'ब्रिक' रखा था। 2011 में दक्षिण अफ्रीका भी इसमें शामिल हुआ तो ब्रिक का 'ब्रिक्स' हो गया। बाद में कई अन्य देश इससे जुड़े, कुछ पूर्ण सदस्य के रूप में तो कुछ आधिकारिक साझेदार के रूप में।

आज ब्रिक्स अंतरराष्ट्रीय सहयोग का एक बेहद महत्वपूर्ण प्रयोग है, जो पश्चिमी-वर्चस्व से दूर वैश्विक शक्ति के पुनर्संतुलन और बहुधुवीय विश्व-व्यवस्था के उभार को बताता है। आज यह ग्लोबल साउथ की एक लगातार प्रभावशाली होती आवाज बन चुका है। 2024-25 में मिस्र, इथियोपिया, इंडोनेशिया, ईरान, सऊदी अरब और यूएई के भी जुड़ने के बाद से ब्रिक्स में अब दुनिया की लगभग आधी आबादी और वैश्विक जीडीपी का करीब 40% हिस्सा आता है (पीपीपी के आधार पर)।

जबकि जी7 में दुनिया की 10% से भी कम आबादी और वैश्विक जीडीपी का 30% से भी कम हिस्सा है। जहां वैश्विक अर्थव्यवस्था में ब्रिक्स की हिस्सेदारी लगातार बढ़ रही है, वहीं विकसित अर्थव्यवस्थाओं में उत्पादकता और आर्थिक वृद्धि की रफ्तार 1990 के दशक से ही लगातार घटती रही है। बात केवल इकोनॉमी तक ही सीमित नहीं, भू-राजनीति भी तेजी से बदली है। पहले जहां पश्चिम का वैश्विक प्रभुत्व हुआ करता था, वहीं अब शक्ति और प्रभाव में अधिक व्यापकता और विविधता है।

ब्रिक्स ने इस धारणा को चुनौती दी है कि विश्व-व्यवस्था द्वितीय विश्व युद्ध के बाद स्थापित पश्चिम-नेतृत्व वाली संस्थाओं के इर्द-गिर्द ही केंद्रित रहनी चाहिए। गैर-पश्चिमी देशों के लिए ब्रिक्स बढ़ती आर्थिक और भू-राजनीतिक अनिश्चितता के खिलाफ एक सुरक्षा-कवच है। कुछ हद तक अमेरिका भी इसमें मदद ही कर रहा है, जो वैश्विक नेतृत्व से पीछे हटने पर आमादा दिखाई देता है। यह रणनीतिक स्वायत्तता को आगे बढ़ाने और आर्थिक सहयोग का दायरा विस्तृत करने के लिए संस्थागत मंच भी उपलब्ध कराता है।

ऐसे में इसमें शामिल होने को लेकर इतना उत्साह होना आश्चर्य की बात नहीं है : तीन दर्जन से अधिक देशों ने औपचारिक रूप से इसकी सदस्यता के लिए आवेदन दे रखा है या इसमें शामिल होने की इच्छा जताई है। इनमें नाटो का सदस्य तुर्किये और अमेरिकी नौसैनिक बलों का प्रमुख ऑपरेशनल-हब बहरीन भी शामिल है। ब्रिक्स के दस साझेदार देश भी हैं- बेलारूस, बोलीविया, कजाखस्तान, क्यूबा, मलेशिया, नाइजीरिया, थाईलैंड, युगांडा, उज्बेकिस्तान और वियतनाम- जो शिखर सम्मेलनों में भाग लेते हैं।

यह ढांचा ब्रिक्स को सहयोग के अपने नेटवर्क का विस्तार करने और ग्लोबल-साउथ का प्रतिनिधित्व करने की अपनी क्षमता मजबूत करने में मदद करता है। ब्रिक्स महज एक प्रतीकात्मक समूह नहीं है। उसने संस्थान-निर्माण के क्षेत्र में ठोस प्रगति की है। न्यू डेवलपमेंट बैंक वैश्विक स्तर पर काम करने वाला पहला बहुपक्षीय विकास बैंक है, जिसकी परिकल्पना और अगुआई उभरती अर्थव्यवस्थाओं ने की है। इसके संस्थापक ब्रिक्स सदस्यों की इसमें हिस्सेदारी और वोटिंग-अधिकार बराबर हैं।

इसके विपरीत, विश्व बैंक और आईएमएफ- दोनों में ही अमेरिका के पास प्रभावी वीटो है। ब्रिक्स अंतरराष्ट्रीय वित्तीय व्यवस्था के भीतर मौजूद कमजोरियों को कम करने के लिए भी काम कर रहा है। अटकलों के विपरीत, यूरो जैसी किसी ब्रिक्स मुद्रा का गठन फिलहाल तो एजेंडे में नहीं है। लेकिन राष्ट्रीय मुद्राओं में व्यापारिक लेन-देन के निपटारे का विस्तार करने, सदस्य देशों की डिजिटल भुगतान प्रणालियों के बीच इंटरऑपरेबिलिटी बेहतर करने, केंद्रीय बैंकों की डिजिटल मुद्राओं को आपस में जोड़ने आदि पर यह ध्यान देता है।



Date: 15-09-26

तकनीक पर नियंत्रण

संपादकीय



कृत्रिम मेधा यानी एआइ को लेकर दुनिया जिस उत्साह से आगे बढ़ रही है, उसमें थोड़ा ठहरकर यह विचार करना जरूरी है। कि क्या मनुष्य तकनीक को साध रहा है। या तकनीक धीरे-धीरे मानव जीवन की गति तय करने लगी है। एआइ का उद्देश्य मनुष्य की क्षमताओं का विस्तार होना चाहिए, न कि उसे एक विकल्प के रूप में विकसित करना । इसलिए इसके विकास की रफ्तार से अधिक महत्वपूर्ण यह सवाल है कि इसकी दिशा और

नियंत्रण किसके हाथ में रहेगा । कृत्रिम मेधा से जुड़ी कंपनी एंथ्रोपिक के मुख्य कार्यकारी अधिकारी डारियो अमोदेई ने इस आधुनिक तकनीक के तेजी से हो रहे विकास को धीमा करने की जरूरत बताकर इसी मूल चिंता की ओर ध्यान दिलाया है। उन्होंने चेताया है कि यदि एआइ की क्षमताओं में सुधार ऐसे ही जारी रहा, तो उन्हें समझने, परखने और नियंत्रित करने की मानव क्षमता पीछे छूट सकती है। यह आशंका महज तकनीकी क्षेत्र की चिंता नहीं, बल्कि मानव सभ्यता के भविष्य से जुड़ा प्रश्न है । इसमें दोराय नहीं कि किसी तकनीक की क्षमता जितनी बढ़ती है, उसके निर्णयों की जवाबदेही का प्रश्न उतना ही जटिल होता जाता है। एआइ यदि रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, न्याय, सुरक्षा, विनिर्माण और शासन जैसे क्षेत्रों में निर्णायक भूमिका निभाने लगे, तो उसकी छोटी- सी चूक भी गंभीर स्थिति पैदा कर सकती है। फिलहाल खतरा ये नहीं है कि तकनीक मनुष्य से अधिक बुद्धिमान हो जाएगी, बल्कि यह है कि मनुष्य उसकी बुद्धिमत्ता पर इतना निर्भर न हो जाए कि अपने विवेक का इस्तेमाल कम कर दे। मौजूदा दौर में एआइ को रोकना संभव नहीं और न ही नई तकनीक को भय की दृष्टि से देखना उचित है, मगर अनियंत्रित गति को प्रगति मानना भी बुद्धिमानी नहीं। ऐसे में आवश्यक है कि दुनिया यह तय करे कि तकनीकी प्रगति की सीमा क्या होनी चाहिए । विशेषज्ञों का मानना है कि यदि अत्यधिक उन्नत एआइ के उद्देश्य इंसानों से अलग हो गए, तो यह मानवता के अस्तित्व के लिए संकट बन सकता है। इसलिए यह सुनिश्चित करना बहुत जरूरी है कि कृत्रिम मेधा मनुष्य का सहारा बने, उसका विकल्प नहीं ।



Date: 15-09-26

ब्रिक्स में शांति की ओर बड़े कदम

अरविंद गुप्ता, (पूर्व राजनयिक एवं डायरेक्टर, वीआईएफ)

अगले साल चीन में मिलने के वायदे के साथ नई दिल्ली ब्रिक्स सम्मेलन का समापन हो गया, लेकिन विश्व शांति को लेकर इससे जो ध्वनि निकली है, उसका दूरगामी असर होगा। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का यह आह्वान उचित है कि महत्वपूर्ण खनिजों और तकनीक को हथियार बनाने से बचना चाहिए। भू-राजनीतिक तनाव से दुनिया भर के लोगों पर पड़ रहे नकारात्मक प्रभावों के कारण ब्रिक्स समूह के भीतर लचीलापन बढ़ाने संबंधी बातों के भी गहरे निहितार्थ हैं।

प्रधानमंत्री मोदी जब पिछले पखवाड़े शंघाई सहयोग संगठन की किर्गिस्तान बैठक में रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन से मिले थे, तब उन्होंने साफ-साफ कहा था कि अंतहीन युद्ध अब खत्म होने चाहिए। भारत चाहता है

कि युद्ध किसी भी कीमत पर रुकें, क्योंकि इनसे कई तरह की दिक्कतें हो रही हैं। इसलिए दुनिया भर की नजरें ब्रिक्स के दिल्ली सम्मेलन पर टिकी थीं, क्योंकि अक्वल तो इसकी मेजबानी भारत के पास थी और दूसरी, इसमें ऐसे-ऐसे देश भी शिरकत कर रहे थे, जिनका अतीत एक-दूसरे के खिलाफ रहा है।

ईरान और संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) का रिश्ता कुछ ऐसा ही है। हाल-फिलहाल दोनों देश ब्रिक्स के सदस्य बने हैं और पहली बार इसके मंच पर आमने-सामने थे। फरवरी में अमेरिका द्वारा इजरायल के साथ मिलकर ईरान पर हमला किए जाने के बाद तेहरान ने पलटवार करते हुए यूएई को भी निशाना बनाया था, जिससे उसे भारी नुकसान उठाना पड़ा था। आशंकाएं थीं कि दिल्ली में शायद ही दोनों एकमत हो सकेंगे। इसकी एक वजह यह भी थी कि मई, 2026 में जब ब्रिक्स के विदेश मंत्रियों की बैठक हुई थी, तब इन दोनों देशों में एकराय न हो पाने के कारण साझा घोषणा-पत्र जारी नहीं हो सका था। हालांकि, बीते कुछ समय में भारतीय राजनय की मेहनत रंग लाई और नई दिल्ली में सर्वसम्मति से घोषणा-पत्र जारी हो सका, जिसमें अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा व सहयोग पर जोर दिया गया है।

दिल्ली घोषणा-पत्र कुल 140 पैराग्राफ का है, जिसमें 26 बिंदु अंतरराष्ट्रीय व क्षेत्रीय शांति और सुरक्षा को समर्पित किए गए हैं। परमाणु निरस्त्रीकरण, मध्य-पूर्व तनाव, क्यूबा संकट, गाजा शांति-प्रयास, फलस्तीन संकट का समाधान, सूडान संकट, सीरिया में राजनीतिक परिवर्तन, अंतरिक्ष में हथियारों की होड़ रोकने, आतंकवाद, साइबर सुरक्षा जैसे तमाम विषय इसमें समेटे गए हैं।

गौरतलब यह भी है कि ब्रिक्स जिन तीन स्तंभों पर मूलतः टिका है, उनमें एक है- राजनीतिक एवं सुरक्षा सहयोग। इसका अर्थ है कि वैश्विक व क्षेत्रीय शांति, सुरक्षा व आतंकवाद का मुकाबला करने के लिए एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं में सुधार जैसे मुद्दों पर ब्रिक्स के सदस्य देश चर्चा करेंगे और कूटनीतिक मदद करेंगे। शेष दो हैं- आर्थिक और वित्तीय सहयोग, जिसके तहत व्यापार, कृषि, बुनियादी ढांचा, ऊर्जा, वित्त व बैंकिंग जैसे क्षेत्रों में आपसी समृद्धि को बढ़ावा देने के प्रयास किए जाते हैं, और तीसरा है- सांस्कृतिक एवं जन-संबंधी जुड़ाव, जिसमें सदस्य देशों के नागरिकों के बीच आपसी संपर्क बढ़ाने, सांस्कृतिक, खेल, शिक्षा, अकादमिक सहयोग आदि को मजबूत करने पर जोर दिया जाता है। इन संदर्भों में नई दिल्ली घोषणा-पत्र से अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा एवं सहयोग को लेकर एक नया दरवाजा खुलता दिखता है।

यूक्रेन युद्ध की सीधी चर्चा तो घोषणा-पत्र में नहीं की गई है, पर ब्रिक्स सम्मेलन के दौरान रूसी राष्ट्रपति पुतिन की भारतीय प्रधानमंत्री मोदी और चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग से अलग से मुलाकात हुई, जिसमें दोनों नेताओं ने उनसे पूर्वी यूरोप में शांति बहाल करने के लिए मदद करने का आश्वासन दिया, जिसका पुतिन ने स्वागत किया। इसका अर्थ है कि ब्रिक्स बैठक से इतर रही बात ईरान युद्ध की, तो घोषणा-पत्र में इस पर गहरी चिंता जाहिर की गई है। हालांकि, सदस्य देश यही मानते हैं कि बातचीत और कूटनीति से ही इस समस्या का समाधान निकलेगा। इसका अर्थ है कि सभी देशों ने एक प्रकार से अपनी सैद्धांतिक स्थिति स्पष्ट

कर दी है और किसी आरोप-प्रत्यारोप में उलझे बिना कूटनीति एवं बातचीत को ही समाधान का रास्ता बताया है। सच भी यही है कि हर तनाव का समाधान बातचीत है, हथियार नहीं।

यह बात समझने लायक है कि ब्रिक्स वैश्विक सुरक्षा के बड़े-बड़े मुद्दों को हल नहीं कर सकता। बेशक, विश्व की करीब आधी आबादी ब्रिक्स सदस्य देशों की है और वैश्विक जीडीपी के लगभग 40 फीसदी हिस्सों पर उनका प्रतिनिधित्व है, फिर भी कुछ मुद्दे काफी जटिल हैं। इनको सुलझाने की जिम्मेदारी सुरक्षा परिषद के पास है। ब्रिक्स की उपलब्धि यही है कि वह जंग में उलझे देशों को एक छत के नीचे लाने, बातचीत करने और घोषणा-पत्र जारी करने के लिए उनमें सहमति बनाने में सफल रहा।

दूसरी बात, जो लड़ाइयां अभी जारी हैं, उनका लंबा इतिहास है। ऐसे में, जब तक संबंधित देश खुद नहीं मानेंगे, तब तक इन युद्धों को रोकना मुश्किल है। ईरान और यूएई का पुरानी बातें छोड़कर आगे बढ़ने का आह्वान एक बड़ी बात है, पर ईरान युद्ध का हल महज एक दिन में संभव नहीं। इसी तरह, आतंकवाद पर 'शून्य सहिष्णुता' को लेकर बनी सहमति और जम्मू-कश्मीर आतंकी हमले की निंदा का लंबे समय में प्रभाव पड़ेगा।

दिवक्कत यह है कि ब्रिक्स के सदस्य देश आपस में भी उलझे हुए हैं, जैसे भारत और चीन। यह सही है कि अंतरराष्ट्रीय बैठकों में द्विपक्षीय मुद्दों की चर्चा नहीं की जाती, पर बैठक से अलग हटकर शी जिनपिंग और नरेंद्र मोदी में जो बातचीत हुई है, उसका असर वास्तविक नियंत्रण रेखा पर पड़ सकता है। हालांकि, इसके लिए इन दोनों नेताओं को भविष्य में भी साथ बैठना होगा। गौरतलब है, साल 2024 के कजान ब्रिक्स सम्मेलन में प्रधानमंत्री मोदी और राष्ट्रपति जिनपिंग की मुलाकात के बाद ही भारत और चीन के रिश्तों पर जमी बर्फ पिघलनी शुरू हुई थी।

कुल मिलाकर, यह कहना उचित है कि अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के गंभीर प्रयास ब्रिक्स सम्मेलन में किए गए। आलोचक भले इसकी यह कहकर आलोचना करें कि इसमें कोई 'रोडमैप' नहीं दिखता, लेकिन अगर बातचीत के लिए नेताओं में सहमति बनती है और पुरानी दुश्मनी की दीवार गिरती है, तो वह भी इस संगठन की बड़ी उपलब्धि मानी जाएगी। ब्रिक्स सिर्फ समाधान का माहौल बना सकता है, और ऐसा करने में संभवतः वह सफल हुआ है।
